IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण के भारतीय दर्शन की प्रासंगिकता

■ इस्लाम मौहम्मद

■ शोधार्थी पीएच.डी. (शिक्षा) मौलाना आजाद विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)

स्वच्छ पर्यावरण को हमारे देश में प्राचीनकाल से वरीयता दी गई हैं। सच तो यह है कि हमारा भारतीय दर्शन पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से जितना समृद्ध है, उतना किसी अन्य देश का नहीं। पर्यावरण संरक्षण का भारतीय दर्शन इतना व्यावहारिक है कि यह हमारी जीवन शैली से जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि सभी सामाजिक–सांस्कृतिक परंपराओं व प्रथाओं के मूल में कही न कहीं पर्यावरण सुरक्षा को महत्व दिया गया है। भारत में प्राचीनकाल से सूर्य, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, वनस्पतियों, सरिताओं और सरोवरों आदि को पूजनीय मानने की परंपरा रही है, जिसके मूल में पर्यावरण संरक्षण का भाव ही निहित है। सूर्योपासना, ग्रहों की अभ्यर्थना, अग्नि पूजा एवं वृक्ष पूजा आदि की परंपराएं विकसित कर हमने सदैव पर्यावरण संरक्षण को आगे बढ़ाने का काम किया।

पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ हमारे देश में जैव विविधता को संरक्षित रखने और उसे समृद्ध बनाने पर भी पूरा ध्यान दिया गया। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में जीव–जन्तुओं को हानि पहुंचाने तथा उनका भक्षण करने की अनुमति नहीं है। जीवों की उपयोगिता के अनुरूप हमने उन्हें धार्मिक और सामाजिक मान्यता प्रदान की और उनके पूजन की परंपरा शुरू कर उनके संरक्षण का संदेश दिया। गाय भारतीय समाज में आज भी पूज्य है राजस्थान का विश्नोई समुदाय आज भी काले हिरनों को शुभ मानकर इन्हें पूजता है तथा इनकी रक्षा के प्रति कृतसंकल्प रहता है। भारत के अनेक आदिवासी क्षेत्रों में पशुओं, वृक्षों व वनस्पतियों आदि को पूजने की प्राचीन परंपरा है। इतना ही नहीं, आदिवासियों के वस्त्र तक प्रकृति के अनुरूप रंग बिरंगे होते हैं। इनकी जीवन–शैली में प्रकृति का पूरा प्रभाव दिखता है। हम नाग को नाग देवता कहकर 'नागपंचमी' जैसा त्योहार अकारण नहीं मनाते। पर्यावरण की दृष्टि से इसका अपना अलग महत्व है। सर्प वायुमंडल में विद्यमान जहरीली गैसों को आत्मसात कर वातावरण को प्रदूषित होने से बचाते हैं। हमारे भारतीय दर्शन में पर्यावरण को ईश्वर के प्रतिरूप के रूप में सम्मानित व व्याख्याता, शाह गोवर्द्धन लाल काबरा, शिक्षक महाविद्यालय जोधपुर (राज.) संरक्षणीय माना गया है।

तैत्तरीयोपनिषद् में कहा गया है –

'ईश्वरीय आत्मा से आकाश की, आकाश से वायु की, वायु से अग्नि की और अग्नि से जल तथा जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। पृथ्वी ने वनस्पति उपजाई, अन्न दिया और मानव जाति सहित असंख्य जीव–जन्तुओं को पैदा किया। इस सृष्टि में प्रत्येक जीव–जंतु की अहम भूमिका है।

भारतीय समाज आदिकाल से पर्यावरण संरक्षक की भूमिका निभाता रहा है। हमने प्रकृति प्रेम को सर्वोपरित रखा। यही कारण है कि हमारे वेद, उपनिषद् व पुराण आदि प्रकृति व पर्यावरण की महिमा से भरे पड़े हैं।

अथर्ववेद के भूमिसूक्त में कहा गया है –

अरण्यं ते पृथिवी स्योन मस्तु

मातरम् औषधीनाम्

मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।

अर्थात् हे भूमि, तेरे वन हमारे लिए सुखदायी हों। भूमि तेरे वृक्षों को मैं इस तरह काटूं कि शीघ्र ही वे पुनः अंकुरित हो जाएं, सम्पूर्ण रूप से काटकर मैं तेरे मर्मस्थल पर प्रहार न करूं। भूमि को औषधियों की माता माना गया है।

पर्यावरण संरक्षण के प्रति हम प्राचीनकाल से अत्यंत सजग और चेतन रहे है।

यजुर्वेद की इन पंक्तियों का उल्लेख आवश्यक है –

वनानां पतये नमः

वृक्षाणां पतये नमः

औषधीनां पतये नमः

अरण्यानां पतये नमः।

उक्त पंक्तियों से यह पता चलता है कि यजुर्वेद में राष्ट्र की तरफ से वृक्षों, औषधियों एवं अरण्यों के रक्षक नियुक्त करने और उन रक्षकों को उचित सम्मान देने का निर्देश मिलता है।

हमने स्वच्छ वायु की उपादेयता और उसके महत्व को बहुत पहले ही समझ लिया था।

ऋग्वेद में कहा गया है –

वात आ वातु भेषजं मयोभु नो हदे

यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधिहिंतः।

वायु की महत्ता को रेखांकित करने वाली उक्त पंक्तियों से आशय यही है कि वायु हमे ऐसी औषधि दे जो शांति और आरोग्य प्रदान करे। इसमे निहित अमृत रूपी निधि हमारी आयु को बढ़ाकर हमें दीर्घजीवी बनाए। स्पष्ट है कि हमने स्वस्थ जीवन के लिए वायु के महत्व को समझा और इसे प्रदूषित होने से बचाने का संकल्प भी लिया।

भारत में पर्यावरण संरक्षण और प्रकृति प्रेम की जड़े बहुत गहरी हैं, जिन्हें हम बराबर सींचते आए हैं। हमने धरती को 'माता' कह कर सम्बोधित किया और जीवनदायिनी नदियों को भी 'मां' के ही समतुल्य माना। इसके पीछे धारणा यही थी कि हम इनका संरक्षण करें, ताकि ये मानव जीवन को सुखमय बनाएं। हमने बहुत पहले इस मर्म को समझ लिया था कि मानव जीवन को बनाए रखने के लिए प्रकृति एवं पर्यावरण को संरक्षित और समृद्ध बनाए रखना नितांत आवश्यक है और इन्हें क्षति पहुँचाकर सुखद मानव जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि हम सदैव प्रकृति के प्रति आस्थानत रहे और उससे ऊर्जा और प्रेरणा प्राप्त करते रहे। जीवन के हर पहलू में प्रकृति के महत्व को सर्वोपरि रखा। यहां तक की कर्मकांडो तक में इसकी उपेक्षा नहीं की, बल्कि इसे प्रमुखता दी। जन्म से मरण तक हम प्रकृति और पर्यावरण को साथ लेकर चले। पहले हमारे यहां यह विधान था कि जब किसी व्यक्ति इहलीला समाप्त हो जाती थी, तो जिस स्थान पर उसकी चिता जलाई जाती थी, उसके चारों कोनों पर मरने वाले के परिजन चार वृक्ष लगाते थे। इतना ही नहीं वर्ष पर्यन्त इन पेड़ों की देखभाल भी परिजन करते थे और इन्हे दूध व जल से सींचते थे। ऐसा विधान किसी अन्य देश में शायद ही हो । हालांकि समय की आपाधापी, स्थानाभाव एवं जीवन–शैली मे आए बदलावों के कारण यह पुरानी परंपरा अब लुप्तप्राय है और अब टहनियां गाड़ कर इस विधान को सांकेतिक रूप से पूरा किया जाता है। हालांकि आज ऐसी परंपराओं को पुनर्जीवित किए जाने की सख्त जरूरत है, ताकि धरती हरी–भरी रहे।

हमारे देश में पर्यावरण और प्रकृति प्रेम को जीवन से अभिन्न रूप से जोड़कर इसके संरक्षण के संस्कार विकसित किए गये। वृक्षारोपण को पुण्य का कार्य बताया गया। इसे संस्कार के रूप में किस तरह प्रतिपादित किया गया, इसका पता **विष्णु धर्म सूत्र** की इन पंक्तियों से चलता है – 'एक व्यक्ति द्वारा पालित एवं पोषित वृक्ष एक पुत्र से भी अधिक महत्व रखता है। देवता इसके फूलों से, पथिक इसकी छाया में विश्राम कर तथा मानव इसके फलों का रसास्वदन कर इन वृक्षों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है। हमारे मनीषियों–मनस्वियों ने किस प्रकार हमें वृक्षारोपण के लिए प्रेरित किया।

वराह पुराण के इस संदेश से पता चलता है –

'पंचाम्रवाती नरकं न याति–।

अर्थात् आम के पांच पौधे लगाने वाला कभी नरकगामी नहीं होता।

पर्यावरण संरक्षण के जिस भारतीय दर्शन की बुनियाद भारत के तपस्वियों, ऋषियों, मुनियों ने रखी, उसे हमारे सम्राटों व शासकों ने राजकीय संरक्षण भी दिया। उन्होंने जनहितकारी कार्यो में उन कार्यो को

वरीयता दी, जो पर्यावरण संरक्षण से जुड़े थे। मसलन बड़े–बड़े सरोवरों और जलाशयों का निर्माण करवाया तथा फलदार और छायादार वृक्ष लगवाए। चंद्रगुप्त मौर्य, सम्राट अशोक व हर्षवर्धन जैसे सम्राटों ने तो इस दिशा में विशेष ध्यान दिया। मध्यकाल में भी शासकों ने पर्यावरण संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया और बागवानी की कला इसी काल में परवान चढ़ी। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से यहां मध्यकाल की एक घटना का उल्लेख प्रेरक होगा, जिससे यह पता चलता है कि तब विकास कार्यो को करते समय भी पर्यावरण संरक्षण का पूरा ध्यान रखा जाता था। मध्यकाल के सम्राट शेरशाह सूरी ने अपने शासनकाल में अनेक जनहितकारी कार्य किए थे, जिनमें सड़कों का निर्माण मुख्य था। उसने सबसे पहले सबसे बड़ी सड़क का निर्माण करवाया था, जो पूर्वी बंगाल के सोनार गांव से शुरू होकर आगरा, दिल्ली और लाहौर होती हुई सिंधु नदी पर समाप्त हुई थी। तब यह सड़क **'सड़क–ए–आजम'** कही जाती थी, जिसे बाद में **'ग्रांड ट्रंक रोड'** के नाम से जाना जाने लगा। इस सड़क के निर्माण के समय शेरशाह ने प्रशासनिक अमले को इस बात की सख्त हिदायत दे रखी थी कि बहुत आवश्यक होने पर ही हरे पेड़ों को काटा जाए तथा निर्माण के बाद सड़क के दोनों किनारों पर नीम, आम, अशोक, पाकड़ तथा पीपल आदि के छायादार वृक्ष लगाए जाएं। मध्यकाल में आज की तरह पर्यावरण की समस्या नहीं थी और न ही प्रदूषण की आज जैसी भयावह स्थिति ही थी, तथापि उस समय शेरशाह ने जिस अग्रिम दृष्टि का परिचय दिया था, वह न रिर्फ श्लाघनीय है, बल्कि प्रेरक भी है। आज के संदर्भो में तो बहुत ही प्रेरक है, क्योंकि आज का विकास, विनाश का पर्याय बन गया है और ऐसा करते हुए हम पर्यावरण की जमकर अनदेखी करते हैं। मध्यकाल के अन्य शासकों जैसे अकबर, शाहजहां आदि ने भी पर्यावरण संरक्षण का पूरा ध्यान दिया और धरती को हरा–भरा रखने का प्रयास किया। कहने का आशय यह है कि हमारे देश में पर्यावरण संरक्षण की जो समृद्ध परंपरा प्राचीनकाल से शुरू हुई, वह अनवरत जारी है। हर काल व दौर में हमने पर्यावरण के प्रति अपनी सजगता और चेतना को कम नहीं होने दिया। यह आज भी बनी हुई है, क्योंकि हमें हमारे दर्शन से यह सीख मिली है कि प्रकृति और पर्यावरण ईश्वर का ही प्रतिरूप है, अतएव इसके प्रति आदर व सम्मान का भाव रखकर हमें प्रकृति और पर्यावरण का संवर्धन करना चाहिए।

भारत की स्थिति –

प्रकृति और पर्यावरण के प्रति हमारा जो सम्मान–भाव है, जो हमें हमारे दर्शन से प्राप्त हुआ है, उसी का यह परिणाम है कि पर्यावरण की दृष्टि से विश्व के दूसरे देशों की तुलना में भारत की स्थिति आज भी बहुत अच्छी है। इस संदर्भ में यहां पर कुछ समय पूर्व 'नेशनल जियोग्राफिक सोसायटी' द्वारा कराये गये उस सर्वेक्षण की रिपोर्ट का हवाला देना आवश्यक है, जिसमें ग्रीन डेस्क सूचकांक में भारत को अव्वल बताया गया है। नेशनल जियोग्राफिक सोसायटी ने 18 देशों के उपभोक्ता व्यवहार का आंकलन करने के बाद जो ग्रीन डेस्क सूचकांक तैयार किया उसमें 61.4 अंको के साथ भारत पहले स्थान पर रहा, जबकि अमेरिका जैसा विकसित और उन्नत देश 44.6 अंको के साथ अंतिम पायदान पर रहा। रिपोर्ट में यह कहा गया है कि भारत के उपभोक्ता पर्यावरण और हरियाली के प्रति कहीं अधिक सजग, चेतन और

संवेदनशील है। रिपोर्ट में बताया गया कि भारत में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन सबसे कम हैं और यहां के उपभोक्ता पर्यावरण के प्रति गंभीर हैं। सबसे खास बात यह है कि भारत की इस उपलब्धि का श्रेय उसकी उस सनातनी संस्कृति को दिया गया, जिसमें प्रकृति को देवतुल्य माना गया है। स्पष्ट है कि पर्यावरण संरक्षण का भारतीय दर्शन आज भी विश्व में अग्रणी है और हम पर्यावरण के प्रति अपने दायित्वों को पूरे समर्पण व आस्था के साथ निभाते चले आ रहे हैं।

आज समूचा विश्व पर्यावरण असंतुलन से उपजी अनेकानेक समस्याओं से जूझ रहा है। भारत भी इन समस्याओं से दो चार हो रहा है। स्वार्थी मनुष्य निरंतर प्रकृति का दोहन कर रहा है और ऐसा करते हुए उसका आचरण प्रकृति विरोधी हो चुका हैं। जिस धरा को हम धरती माता कह कर संबोधित करते हैं, उसी धरा की छाती को स्वार्थ में अंधे होकर छलनी कर डाला। यहां कितनी मौजूं है–

कवयित्री महादेवी वर्मा की ये पक्तियां –

कर दिया मधु और सौरभ दान सारा एक दिन

किन्तु रोता कौन है तेरे लिए दानी सुमन

मत व्यथित हो फूल, किसको सुख दिया संसार ने

स्वार्थमय सबको बनाया है यहां करतार ने।

उक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि प्रकृति तो हमें सर्वस्व प्रदान करती है, किन्तु हम स्वार्थमय होकर प्रकृति का तनिक भी ख्याल नहीं रखते हैं। हमारे स्वार्थमय आचरण ने ही पर्यावरण असंतुलन जैसी वैश्विक समस्या को जन्म दिया है। पर्यावरण को क्षति पहुंचाने वाले अधिकांश कारण मानवजनित ही हैं और इसमें विकसित देशों का विशेष योगदान है। जहां तक भारत का प्रश्न है, तो आज के संदर्भो में यह अत्यंत आवश्यक है कि हम पर्यावरण संरक्षण के अपने प्राचीन दर्शन में प्राण फूंके और उससे विमुख न हो। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारा देश कृषि प्रधान है। देश के किसानों का भाग्य मौसम तय करता है। मौसम ने साथ दिया तो किसानों के चेहरे खिल जाते हैं और यदि साथ न दिया तो मुरझा जाते हैं। हमारी खाद्यान्न सुरक्षा और सुख–समृद्धि के लिए मौसम की अनुकूलता नितांत आवश्यक है और इस अनुकूलता को बनाए रखने के लिए प्रकृति और पर्यावरण को संरक्षित रखना अपरिहार्य व आवश्यक है। वैसे, ऐसा करने के लिए हमें बहुत चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि हमारे पास पर्यावरण संरक्षण के भारतीय दर्शन का ठोस धरातल विद्यमान है।

निष्कर्ष –

पर्यावरण संरक्षण का जो रास्ता हमें हमारे पूर्वजों ने दिखाया है, हम उस पर मजबूती से कदम बढ़ाएँ और एक बार फिर अपने वेदों, उपनिषदों की ओर लौटें। ऐसा करते हुए हम उस वैश्विक समुदाय को भी आईना दिखा सकते हैं, जो इस साझा चुनौती से निपटने में अब तक असफल रहा है। अपनी

वैदिक संस्कृति के प्रसार से ऐसा करते हुए भारत **'विश्व गुरू'** की अपनी भूमिका में वापस लौट सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

- गुप्ता, नत्थू लाल (1987), मूल्यपरक शिक्षा अजमेर, कृष्णा संदर्भ।
- बघेला, हेत सिंह (2004), भारतीय संस्कृति का विकास नई दिल्ली, रिसर्च पब्लिकेशन।
- पाण्डेय, चन्द्रशेखर एवं व्यास, शान्तिकुमार (2002), संस्कृत साहित्य की रूपरेखा, कानपुर, साहित्य निकेतन।
- पाठक, गणेश दत्त (2006), मनुस्मृति वाराणासी : ठाकुर प्रसाद कैलाशनाथ बुकसेलर।
- सिंह, राजकिशोर (1996), वैदिक साहित्य का इतिहास आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।
- अग्रवाल, अनिल (2021), पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, प्रयागराज मंथन प्रकाशन।

International Research Journal
IJNRD
Research Through Innovation